ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-2 (Apr.-June) 2025
Page No.- 120-124
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

1. अविनाश कुमार चौधरी
शोधार्थी (हिन्दी),
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

2. प्रो. सतीश कुमार राय
प्रोफ़ेसर एवं मानविकी संकायाध्यक्ष,
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

Corresponding Author :

अविनाश कुमार चौधरी
शोधार्थी (हिन्दी),
बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर.

खगेन्द्र ठाकुर का व्यंग्य लेखन

व्यंग्य के स्वरूप को लेकर विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान इसे शैली मानते हैं तो कुछ स्वतंत्र विधा। भारतीय काव्यशास्त्र में व्यंग्य को ध्वनि के रूप में विवेचित किया गया है। व्यंग्य वस्तुतः शैली ही है जो अपनी व्यापकता के कारण आज विधा के रूप में भी मान्य हो रही है। एनसायक्लोपीडिया ब्रिटानिका के आधार पर कहा जा सकता है - "व्यंग्य हंसी-मजाक में यथार्थ और कड़वी बात कहने की कला है। इसमें राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि विसंगतियों और विडम्बनाओं पर चुटीला प्रहार होता है। 'व्यंग्य' अपनी साहित्यिक विधा के रूप में परिहास्यादपद अथवा विशेष व्यक्ति के प्रति खिल्ली उड़ाने अथवा चोट पहुँचाने की प्रहारात्मक अभिव्यक्ति है।' साहित्यिकता और हास्य उसके आवश्यक अवयव हैं।"[1]

डॉ० खगेन्द्र ठाकुर हिन्दी के यशस्वी रचनाकार हैं। कविता, आलोचना, संपादन और व्यंग्य लेखन के क्षेत्र में उनका योगदान अविस्मरणीय है। व्यंग्य के संदर्भ में उनकी स्पष्ट दृष्टि है। वे लिखते हैं- "मेरे विचार से व्यंग्य किसी भी तरह स्वतंत्र और स्वायत्त विधा नहीं है। यह एक शैली मात्र है, अपनी बात कहने की एक रीति है। खुद परसाई जी ने इतनी तरह से व्यंग्य लिखा है कि कोई उस पर ध्यान से गौर करे, तो असानी से समझ जाएगा कि व्यंग्य विधा नहीं एक विशिष्ट शैली है। परसाई जी ने निबन्ध लिखे हैं, कहानियाँ लिखी हैं, छोटी-छोटी टिप्पणियाँ लिखी हैं। निबन्धों में भी सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक सांस्कृतिक क्षेत्रों के विविध विषय है।"[2]

खगेन्द्र ठाकुर का पहला व्यंग्य संग्रह 'देह धरे को दण्ड' परिमल प्रकाशन इलाहाबाद द्वारा 1997 ई० में प्रकाशित हुआ। उस समय डॉ०

खगेन्द्र ठाकुर पटना में रहकर प्रगतिशील लेखक संघ की गतिविधियों को संचालित कर रहे थे। उसी दौर में उन्होंने 'जनशक्ति' अखबार का संपादन भी किया। जनशक्ति में 'राहगीर' स्तंभ में उन्होंने उस समय की विषंगतियों पर व्यंग्य किया। उन्हीं व्यंग्यात्मक टिप्पणियों का संग्रह है 'देह धरे को दण्ड'। पुस्तक के आमुख में उन्होंने लिखा है- "साहित्य-लेखन मात्र एक सामाजिक कर्म है, क्योंकि यह एक विशेष प्रकार का सृजन है और हर प्रकार का सृजन मनुष्य-जीवन का अत्यन्त आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण कार्य है। सृजन-कर्म की विशिष्टता ने ही मनुष्य को दूसरे जीवों से भिन्न दर्जा दिया है और इस प्रक्रिया में एक तरफ मनुष्य और विकसित होता गया है तो दूसरी तरफ उसका कर्म भी जटिल होता गया है। इस क्रम में ही अनुभव से पता चलता है कि कुछ ऐसे लोग भी होते हैं, जो मनुष्य के विकास के खिलाफ होते हैं और ऐसे लोगों से लगाव रखने वाले कुछ लेखक भी होते हैं। इसलिए साहित्य का सामाजिक संघर्ष भी बन जाता है, लेकिन व्यंग्य-लेखन का संघर्ष तो अत्यन्त मुखर और प्रखर होता है, क्योंकि व्यंग्य का निशाना एकदम स्पष्ट होना चाहिए, भले ही चोट सीधे न हो। व्यंग्य लेखन के लिए सामाजिक विधि-निषेध का स्पष्ट ज्ञान जरूरी है। इसके बिना व्यंग्य बमरोग बन जाता है। यदि हम समाज के साथ समाज को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं, तो रास्ता रोकने वाले पर चोट करनी ही होगी, ऐसी चोट की वह तिलमिला कर हट जाए और आगे चलने वाले को रास्ता साफ दिखने लगे।"[3]

इसी संदर्भ में उन्होंने आगे लिखा है- "बनार्ड शॉ ने कहीं कहा है कि व्यंग्य लिखने का सर्वोत्तम तरीका है सच कहना। लेकिन जिस समाज में भाँति-भाँति के लोग हो, भाँति-भाँति के स्वार्थ हों, वहाँ सच कहने में कितना जोखिम है, इसका गवाह मानवता का इतिहास है। हमारे देश में अभी पूँजी का राज है और पूँजी का राज झूठ के सहारे चलता है, क्योंकि इसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण को ढ़ँकना पड़ता है। सच्चाई को सच्चाई से नहीं झूठ से ही ढँका जाता है। सच कहना जोखिम का काम हो जाता है, तभी जब कोई झूठ को बेपर्दा करने लगता है तो प्रभुताशाली वर्ग बेपर्दा होना कब पसंद करता है? लेकिन ऐतिहासिक सर्जना में लगा मनुष्य ही कब उसकी पसंद का परवाह करता है? यह व्यंग्य करेगा, वह छटपटाता रहे। वह छटपटाये नहीं तो व्यंग्य किस काम का? लेकिन वह छटपटाये, यह एक बात है, नये मनुष्य का साथी और सहयात्री उत्साहित हो, प्रसन्न हो, उसका रेचन हो, यह है दूसरी बात और दोनों बातों के मिलने से एक पूरी बात बनती है।"[4]

'देह धरे को दण्ड' 42 व्यंग्य टिप्पणियों का संग्रह है। पहले व्यंग्य की शुरुआत कितना मनोविनोद पूर्ण है- "एक दिन शाम को बाजार जाते हुए एक साहित्यकार मित्र मिल गये। मैंने पूछ दिया - 'किधर जा रहे हैं?' उन्होंने बड़ी आजिजी से कहा - 'कहाँ जाएँगे भाई यों ही टहल मार रहे हैं। लेकिन आपकी यह बुरी आदत है कि हमेशा पूछ बैठते हैं - 'किधर जा रहे हैं?' इस तरह हमारे वे मित्र हमारे मामूली से सवाल पर बिगड़ गये। लगा जैसे मैंने उनके मर्म पर अंगुली रख दी हो या उनकी कोई कमजोरी पकड़ ली हो। हालांकि मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं था और न मुझे मित्र की कमजोरी पकड़ कर खुश होने का एहसास ही हो रहा था। लेकिन जब वे चिढ़ ही गये तो मैं रस लेने लगा। मैंने फिर पूछ दिया - तो आप यों ही निकल गये, अकविता की तरह निरुद्देश्य?

इस दूसरे सवाल से मेरे साहित्यकार मित्र और क्रुध हो गये - 'आज आप तुल गये हैं मेरी शाम को खराब करने को! अकविता निरुद्देश्य होती है? और

होती है, तो होती है, आप क्यों परेशान हैं? आप कविता में उद्देश्य खोजते हैं तो अकविता निरुद्देश्य नहीं होगी।"[5]

व्यंग्य में तीन प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से परिलक्षित होती है- बुद्धि कौशल, कटाक्ष और मनोविनोद। डॉ॰ खगेन्द्र ठाकुर की व्यंग्य टिप्पणियों में ये तीनों प्रवृत्तियाँ स्पष्ट रूप से मिलती है। राजनीतिक विडंबनाओं पर भी उनकी टिप्पणियाँ काफी धारदार है। उदाहरणार्थ- "राजधानी में मौसम की गर्मी तो महसूस नहीं हो रही है, कहीं वर्षा हो जाने से हवा में नमी आ गयी है, लेकिन जनता-समारोह के चलते राजनीतिक गर्मी सड़कों पर भी बेहद महसूस हो रही है। जनता समारोह या जनता मेले में शामिल हजार लोग कहते हैं कि यह जनता-मौसम है, इसलिए जैसे इस दौर में खुले होटल जनता-होटल कहलाता है, सैलून जनता-सैलून कहलाता है, वैसे ही अभी विधानसभा चुनाव के सभी उम्मीदवार जनता उम्मीदवार हैं। वैसे उम्मीदवारी का टिकट पाने की उम्मीद खो बैठे, ने कहा जनता तो पीछे छूट गयी है और उम्मीदवार यहाँ आ गये हैं।"[6]

अवसरवादी राजनीति पर उन्होंने जम कर कटाक्ष किया है। संपूर्ण क्रांति की छद्म योद्धाओं पर यह प्रहार कितना प्रबल है- "मुझसे अब रहा नहीं गया। मैंने टोक दिया - भाई साहब, जे॰पी॰ ने तो कहा था विधानसभा भ्रष्टाचार का अड्डा है, उसको तोड़ दो, फिर आप लोग क्यों परेशान हैं, उसमें घुसने के लिए? इतना सुनते ही वे बिगड़ गये - जे॰पी॰ ने जब कहा था, तब कहा था, अब तो वे भी नहीं कह रहे हैं, आप हमें क्यों उपदेश दे रहे हैं?

अच्छा, भाईजी गुस्साते क्यों हैं मैं अपनी बात वापस लेता हूँ। - फिर मैं सामने दीवार से टंगे गाँधीजी के चित्र को देख कर सोचने लगता हूँ - बापू! यह सब कुछ तुम्हारे नाम पर हो रहा है। क्या सबको तुम्हारा आशीर्वाद प्राप्त है? बापू! तुम तो रामराज लाना चाहते थे न! रामराज में तो गद्दी के हकदार सभी थे, लेकिन दावेदार कोई नहीं। सबसे पहले हकदार थे राम सो राज्याभिषेक छोड़ कर जंगल चले गये, लक्ष्मण भी उनके पीछे हो लिए तो एक दावेदार घर गया। भरत को गद्दी दिलाने के लिए कैकेयी इतनी बदनाम हुई, सो भरत भी राम का खड़ाऊँ लेकर कुटिया में बैठ गये और अन्तिम दावेदार शत्रुघ्न भरत की सेवा में लग गये। तुम्हारा कौन सा रामराज है?

मुझे लगता है कि बापू मेरे कान में कह रहे हैं- भाई रामराज, जिसमें गद्दी के हकदार सभी दावेदार कोई नहीं, वह मेरी हत्या के पहले का था। मेरी हत्या के बाद रामराज बदल गया, जिसमें गद्दी के दावेदार सभी, हकदार कोई नहीं।"[7]

इस संदर्भ में यह टिप्पणी भी ध्यातव्य है - "गाँधीजी की चर्चा फिर, जोर-शोर से चल पड़ी है। चर्चा तो पहले भी थी लेकिन इधर ऐसा आभास दिया जा रहा है कि साक्षात गाँधी का राज कायम हो गया है, ऐसा लगता है कि गाँधीजी ही गद्दी पर बैठ गये हैं और जवाहरलाल नेहरू को अपनी लाठी से पीट रहे हैं। एक बार जवाहरलाल जी ने गाँधी जी से पूछा था - बापू, आप तो अहिंसावादी है, हाथ में लाठी क्यों रखते हैं? तो गाँधीजी ने जवाब दिया था- 'तुम्हारे जैसे शरारती लड़कों को पीटने के लिए।' लेकिन गाँधीजी ने अपनी लाठी जवाहरलाल पर कभी नहीं चलायी। अब हमारे नये दौर के पुराने नेतागण कहते हैं कि असल में गाँधी जी को मारा जवाहरलाल ने, नाथू राम गोडसे ने नहीं। इसलिए गाँधीजी का राज फिर से लौटा। वे गाँधी जी से जवाहरलाल को पिटवा रहे हैं। यह माहौल देखकर मैं इस वर्ष गाँधी जयन्ती का विशेष महत्व समझ, एक दिन शाम को चला गया गाँधीघाट। वहाँ

जो दृश्य मैंने देखा, उसका वर्णन मेरे बूते की बात नहीं, लेकिन न कहूँ तो मन में खुदबुदी रह जाएगी। जैसे राजा के सींग का रहस्य जानने वाले नाई के मन में थी। आप पूछेंगे यह क्या बात थी? तो पहले यही सुन लीजिए। एक राजा के माथे में दो सींग थे, जिन्हें वे एक बड़े मुँड़ेठे से ढ़के रहते थे। उनका नाई इस बात को जानता था। राजा ने उसे कह रखा था कि किसी से कहा तो सिर उड़ा देंगे। नाई के मन में खुदबुदी थी, अंकुलाहट थी। लेकिन किसी से कहना संभव नहीं था, सिर का मोह था। आखिर उसने एक पेड़ के कोटर में कह कर सन्तोष किया। संयोग ऐसा कि राजा ने एक बार उसी पेड़ की लकड़ी से तबला-डुग्गी बनवायी गयी, तो तबले से आवाज निकली - 'राजाजी के दो सींग हैं।' अब तो राजा की हालत खराब थी। उसकी त्योरी चढ़ गयी। लेकिन आवाज तो तबले से निकली थी और दरबार भरा हुआ था। क्या करें, मन मसोस कर रह गये। डुग्गी पर चोट पड़ी तो उसने पूछा - 'किन्ने कहा?' फिर तबले पर चोट पड़ी तो जबाब आया - 'राजा के नाई ने कहा।' इस तरह राजा के दो सींगों का भेद भरे दरबार में खुल गया। पता नहीं नाई का सिर उड़ा या नहीं?"[8]

उनके व्यंग्य लेखों का दूसरा संग्रह 'ईश्वर से भेंटवार्ता' 2013 ई० में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक के पहले खण्ड में 17 व्यंग्य परक लेखक है और दूसरे खण्ड में 5 चिंतन प्रधान निबंध है। रचनाकार की निष्पक्षता और निर्भिकता के परिणामों पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने लिखा है - "प्रेमचन्द ने कालिदास की कुल्हाड़ी इस तरह चलायी कि अपनी पहली किताब जब्त करवा दी, अपना नाम बदलना पड़ा और अंततः नौकरी भी छोड़नी पड़ी। उन्हें, लेकिन अँग्रेजी राज का समर्थन नहीं किया। कितना कहा जाए, माखनलाल चतुर्वेदी ने तो हद ही कर दी। 1952 में उन्हें राष्ट्रपति ने राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया था। खरगोन का जिलाधिकारी मनोनयन पत्र लेकर उनके सामने हाजिर हुआ। माखनलाल जी ने कहा, "मैं क्या करूँगा इसे लेकर, वापस ले जाओं।" जिलाधिकारी चकित था। उसने कहा, "सर आप एम०पी० हो गये।" माखनलाल जी बिगड़े, "तुम समझते हो मैं समझ नहीं रहा हूँ, मैं बेवकूफ हूँ? मैं कह रहा हूँ कि मैंने स्वाधीनता-संग्राम में इसलिए भाग नहीं लिया था कि एम०पी० होना है। इसे वापस कर दो।"[9]

इस आलेख के अंत में वे लिखते हैं - "आप देख रहे हैं कि कालिदास की कुल्हाड़ी लगातार चल रही है और यही कुल्हाड़ी है, जिसके कारण मनुष्य की रचनात्मकता बची हुई है। वैसे मुझे डर लग रहा है कि कालिदास, कबीरदास, तुलसीदास आदि को यदि कोई किसी एन० जी० ओ० में फँसा दे तो उनकी भी बुद्धि ठिकाने लग जाएगी और कुल्हाड़ी चली जाएगी किसी संग्रहालय में। फिर कविता का क्या होगा? फिर साहित्य का क्या होगा? मानव मूल्य और मनुष्य की रचनाशीलता का क्या होगा?"[10]

देश भक्ति के बदलते स्वरूप पर यह कटाक्ष कितना प्रासंगिक है - "जब-जब हमारे देश की सीमा पर संकट दिखाई पड़ता है, तब-तब हमारे देश की आकाशवाणी और दूरदर्शन से दिन में कई बार सुनाई पड़ता है - ऐ लोगों, जरा आँख में भर लो पानी। जो शहीद हुए हैं उनकी याद करो कुर्बानी।' हमारे देश में ऐसे भी कभी-कभी देश-भक्ति का ज्वार आता है और उस ज्वार की जानकारी देशवासियों को आकाशवाणी से होती है। दूरदर्शन पर उसके दर्शन सैनिकों की बहादुराना लड़ाई और सैनिकों की शहादत के रुप में, शहीद सैनिकों के खून और लाशों में होते हैं। यह सब कुछ सीमा पर होता है। देश के भीतर भी देशभक्ति दिखाई पड़ती है बढ़ती हुई महँगाई और बेरोजगारी को

बर्दाश्त करने के लिए, युद्ध के नाम पर टैक्स में वृद्धि को सहर्ष स्वीकार कर लेने के लिए तैयार रहने में और सब से अधिक सरकार की आलोचना बन्द करके उसकी प्रशंसा करते रहने में। देशभक्ति के ज्वार के दिनों में भूखमरी, भ्रष्टाचार या ऐसे अन्य दुर्गुणों की चर्चा करना देशद्रोह माना जा सकता है। यदि चुपचाप आकाशवाणी और दूरदर्शन पर बैठे रहे तो यह देशभक्ति में शुमार होगा। ध्यान में रखिए की देशभक्ति की कोई धरतीवाणी नहीं होती, और उसका निकट दर्शन भी नहीं होता। ठीक ही है, भगवद्भक्ति या ईश्वरभक्ति आधुनिक युग में जन-कार्यवाईयों के असर से देशभक्ति का रूप ले लिया तो क्या? उसमें जब भक्ति हो, तो उसे ऊपर से ही आना चाहिए। और फिर यह भी है कि भक्ति दर्शन करने की चीज़ नहीं है, दूर से भी नहीं। भक्ति तो प्रकट की जाती है, आत्मसमर्पण के जरिये दर्शन पाने के लिए - आराध्य के दर्शन। भक्ति अनुभव कराने की चीज़ हैं, देखने-दिखाने की नहीं। दिखाई पड़ जाने पर भक्ति का प्रभाव गायब हो जाने का खतरा रहता है।"[11]

खगेन्द्र ठाकुर के व्यंग्य निबंध उनके व्यापक सामाजिक सरोकार, प्रखर राजनीतिक चेतना और सर्जनात्मक दक्षता का साक्ष्य देते हैं। ये व्यंग्य निबंध पाठकों की बौद्धिकता को झकझोरते हैं। उनसे सीधा संवाद करते हैं और सत्ताधीसों पर प्रहार भी करते हैं। वे आजादी के बाद के मोह भंग के कारणों की गहरी परताल करते हैं, वेदना व्यथित होते हैं और वेदना में ही विद्रोह का स्वर मिलाते हुए वे अपनी व्यंग्य रचनाओं को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ :

1. हिंदी साहित्य ज्ञानकोश, खण्ड-6, प्रधान संपादक - शंभुनाथ, भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता, प्रथम संस्करण : 2019 ई०, पृ.-3666.
2. इस पुस्तक के प्रसंग में, ईश्वर से भेंटवार्ता, भारतीय ज्ञानपीठ, पहला संस्करण : 2013, पृ.-04.
3. लेखक की ओर से, देह धरे को दण्ड, पृ.-05
4. वही, पृ.-05-06.
5. स्वतंत्रता किसके लिए, देह धरे को दण्ड, पृ०-09
6. रामराज गांधी की हत्या के पहले और बाद, वही, पृ.-39.
7. वही, पृ.-41-42.
8. हकदार गांधी के या गांधी के लाठी के, वही, पृ.-50.
9. कालीदास की कुल्हारी, ईश्वर से भेंटवार्ता, पृ.-18-19.
10. वही, पृ.-19.
11. जरा आँख में भर लो पानी, वही, पृ.-20.

•